''डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन' के काव्य में जनवादी स्वर''

डॉ.कृष्ण कान्त दुबे

सहायक प्रो. हिन्दी विभाग

पी.एस.एम.पी.जी.कॉलेज,कन्नौज,उ.प्र

'जनवाद' शब्द के लिए अंग्रेजी का 'डेमोक्रेसी' शब्द व्यवहार होता है। 'डेमोक्रेसी' शब्द ग्रीक भाषा के 'देमोस' और क्रेटिन' नामक दो शब्दों के मेल से बना है। देमोस का शाब्दिक अर्थ है–'जनता' और क्रेटिन धातु का शाब्दिक अर्थ है–'शासन करना'। अंततः 'डेमोक्रेसी' का शाब्दिक अर्थ हुआ– जनता का शासन। जनतंत्र एक शासन प्रणाली है और जनवाद इसका वैचारिक आधार। ''जनवाद के मूल में स्थित 'जन' शब्द काफी पुराना है। भारतीय साहित्य में जनपद में 'जन' की प्रतिष्ठा काफी प्राचीन काल से चली आ रही है।सामान्य रुप से कथा साहित्य में 'जन' उस इकाई का परिचायक है, जिसमें बहुसंख्यक शोषित एवं पीड़ित समष्टि की चरित्रात्मक अवधारणा उद्घाटित होती है।जनवाद के लिए हम कह सकते हैं कि यह कला, साहित्य और जीवन के प्रति विशिष्ट दृष्टिकोण है, जो जन सामान्य को महत्व देता है।''[1]

'दि कंसाइज ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी' की माने तो जनवाद को इस रुप में परिभाषित करती है, ''जनतंत्र (डेमोक्रेसी) संपूर्ण आबादी द्वारा नियंत्रित एक शासन प्रणाली है, जो प्रायः चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा संचालित होती है। अथवा इसी तरह से शासित राज्य है। अथवा ऐसा कोई भी संगठन है जो जनतांत्रिक सिद्धान्तों पर आधारित हो।''[2] 'हिन्दी साहित्य कोश' में जनवाद की परिभाषा जिन शब्दों में दी गयी है उसे भी देखना आवश्यक है–''इस शब्द का प्रयोग चिंतन के इतिहास में विभिन्न अर्थों में किया गया है। अपने व्यापक रुप में जनतंत्र एक निश्चित प्रकार की समाज व्यवस्था और शासन प्रणाली का द्योतक है। समाज व्यवस्था के रुप में जनतंत्र समता और स्वतंत्रता की स्थापना कर समाज को एक विशाल भ्रातृत्व के बंधन में बांधने का प्रयास करता है।''[3] बेशक लोकतंत्र की आत्मा जनता की संप्रभुता है जिसकी परिभाषा युगों के साथ बदलती रहती है। इसके आधुनिक रुप के आविर्भाव के पीछे शताब्दियों लंबा इतिहास है। यद्यपि रोमन साम्राज्यवाद ने लोकतंत्र के विकास में कोई राजनीतिक योगदान नहीं दिया, फिर भी रोमन सभ्यता के समय में ही स्थाई विचारकों ने आध्यात्मिक आधार पर मानव समानता का समर्थन किया जो लोकतंत्रीय व्यवस्था का महान गुण है।

मानव सभ्यता के विकास के सम्बन्ध में जो कुछ भी सोचा और चिन्तन किया जाता है वह सब जनवाद के ही निकट या जनवाद के ही रूप में प्रस्तुत हुआ है। जनवाद के विषय में विभिन्न विद्वानों ने अपने सिद्धान्तों को मानव समुदाय के सम्मुख प्रस्तुत करके जनवाद जैसे मंच की स्थापना की है। विद्वानों ने जनतंत्र के शाब्दिक अर्थ को जनता से जुड़ा होना ही माना है, और जो लोग सामान्य जनता के सन्दर्भ में अपने विचारों को प्रस्तुत करके सम्पूर्ण संसार के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं तथा उनकी दुखानुभूति, पीड़ा तथा शोषण के विषय में सशस्त्र क्रान्तिकारी आन्दोलन चलाकर धनीवर्ग व सम्राज्यवादी ताकतों का विनाश करके जनवाद को स्थापित करते हैं, अतः वे वास्तविक रूप से जनवादी विचारक कहे जाते हैं।

जनवाद के सन्दर्भ में मार्क्सवादी विचारधारा प्राण सूत्र के रूप में प्रस्तुत हुई है। मार्क्सवादीयों ने अपने सिद्धान्तों में मनुष्य के कल्याण के लिए अनेक दर्शन सामने रखे और आवश्यकता पड़ने पर क्रान्ति के विंध्वसक रूप को भी ग्रहण किया है। कार्लमार्क्स,

एंगल्से, लेनिन जैसे प्रमुख विचारकों ने जनवाद से जुड़े अनेक मार्ग प्रशस्त किये जिसके फलस्वरूप जनतंत्र या जनवाद की जड़े मजबूत हुई और आम–आदमी के जीवन, में भौतिक के अतिरिक्त सामाजिक, राजनीतिक जीवन में भी अभूतपूर्व परिवर्तन आया।

मानव सम्यता के विकास के साथ–साथ जिस वर्ग–विभक्त समाज की स्थापना होती गई, वह निरन्तर अपने अन्तर्निहित आंतरिक अन्तर्विरोधों के सतत् संघर्ष के साथ वर्गहीन समाज के निर्माण की ओर गतिशील रहा है। समाज में हर तरफ पुराने और नये के बीच ह्रासशील और विकासशील के बीच प्रतिगामी और प्रगतिशील के बीच संघर्ष जारी है। साहित्य और समाज का अन्तर्सम्बन्ध, कार्यकारण सम्बन्ध की तरह ही है। इधर 'जनवाद' शब्द का प्रयोग जोर–शोर से होने लगा। 'जनवाद' शब्द हिन्दी साहित्य और भारतीय राजनीति दोनों में ही यह नया शब्द है। हिन्दी के रचनाकार इसे 'जनवाद' के नाम से जानते हैं, और राजनीतिक लोग इसी 'जनवाद' को जनतंत्र, लोकतंत्र, प्रजातंत्र जम्मूरियत और लोकशाही आदि नामों से पहचानते हैं। वर्तमान सामाजिक, राजनैतिक और साहित्यिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखकर देखें तो 'जनवाद', मार्क्सवाद, प्रगतिवाद आदि के स्थापनात्मक शब्द के रूप में प्रयुक्त नहीं हुआ है। इसलिए इसे लेकर आज भी भ्रम बना हुआ है।

जनतंत्र या जनवाद का शाब्दिक अर्थ जनता से जुड़ा होना ही कहा जा सकता है। अतः जो लोग सामान्य जनता के सन्दर्भ में अपने विचारों को समावेशित करके, सम्पूर्ण संसार के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं और उनके दुख, पीड़ा तथा शोषण के विषय में सशस्त्र क्रांतिकारी आन्दोलन चलाकर पूंजीवादी तथा साम्राज्यवादी शक्तिओं का नाश करके, जनतंत्र या जनवाद की स्थापना करते हैं, वे वास्तविक रूप से जनवादी विचारक हैं।

आज हमारा देश जिस मोड़ पर खड़ा है। मातृ–भूमि की स्वाधीनता और प्रगति के साथ ही 'जनतंत्र' या 'जनवाद' धर्म निरपेक्षता और साम्राज्यवाद के प्रति आस्था या विश्वास रखने वाले प्रत्येक मनुष्य को जनवाद के सन्दर्भ में वास्तविक और स्पष्ट समझ रखना अत्यन्त आवश्यक है। यह इसलिए अति आवश्यक है कि क्रांति, प्रगति, मानवतावाद और समाजवाद आदि शब्दों की तरह ही 'जनवाद' शब्द का प्रयोग भी हर तरफ के राजनीतिक खेमे में वेहिचक किया जा रहा है और उसकी इच्छानुसार व्याख्याएं भी प्रस्तुत की जा रही हैं। ऐसी अनुभूति हो रही है कि यह शब्द अपने यथार्थ अर्थ को खो बैठा है। जिस भांति रबड़ को खींचा व ताना जाता है उसी तरह जनतंत्र को भी अपनी–अपनी और खींचने तथा तानने का संघर्ष सा चल रहा है, और इन जनवादियों और प्रगतिशीलों से भी अधिक प्रतिक्रियावादी, दक्षिण पंथी एवं फासिस्ट दल तथा शक्तियों जनवाद की दुहाई दे रहा हैं और खुद के जनवाद का वास्तविक संस्थापक, पोषक एवं रक्षक सिद्ध करने में अपनी एक–एक सांस और अपने उपलब्ध हर एक साधन का उपयोग कर रहीं है। जनता के रक्षक और भक्षक, शोषक और शोषित, दोनों ही जनवाद की रट लगा रहे हैं। अब देखना यह है कि इन दोनों में से कौन वास्तविक जनवादी है, और कौन खोखला है। यह कटु सत्य है कि किसी भी देश की सामाजिक व्यवस्था का मूल– आधार या नींव उसकी अर्थनीति ही होती है। देश का राजनीतिक ढांचा उसके आर्थिक ढांचे के अनुरूप ही निर्मित होता है, अतः देश की अर्थनिति का प्रतिबिम्ब उसकी राजनीति में साफ दिखाता है।

राजनीतिक व्यवस्था, राजनीतिक सिद्धान्त और उसकी नीतियां अर्थनीति से अलग–अलग नहीं होती है और न ही उनका कोई स्वतन्त्र आस्तित्व ही होता है। राजनीति मात्र अर्थनीति का ही पोषण करती है। इसलिए उस देश की सामाजिक व्यवस्था को अपनी अर्थनीति के अनुसार ही देश के राजनीतिक भवन से अधिक होता है, फिर भी यह मान लेना एक भयंकर भूल होगी कि जनवाद का अर्थनीति से कोई सम्बन्ध नहीं है, वास्तविकता तो यह है कि ये आ कर राजनीति में समावेशित होता है। अस्तु, किसी सामाजिक व्यवस्था में धन और पूंजी के स्वामित्व,

उत्पादन, वितरण आदि के विषय में आम–आदमी या श्रमशील वर्ग के हाथों में ही जितनी अधिक उनके नियंत्रण और नियमन की बागडोर होगी और जनता के जनतांत्रिक अधिकार इन विषयों में जितनी ही ठोस, होगें, उस देश की राजनीतिक व्यवस्था में उतना ही ठोस और मजबूत जनवाद भी होगा। जनवाद श्रमशील या मजदूर वर्गों के पूर्ण आर्थिक अधिकारों और अवसरों के उपयोग से ही पनपता तथा फलता–फूलता और वास्तविक रूप में समाज के समक्ष प्रस्तुत होता है। आम–आदमी की स्वतन्त्रता ही सच्चे जनवाद की कसौटी है।

'जनवाद' या जनतंत्र के अर्थ को स्पष्ट करते हुए ललित मोहन अवस्थी ने लिखा है :–''समाजवादी व्यवस्था में जब शोषक वर्ग का आस्तित्व समाप्त हो जाता है तब आम–आदमी को अपने जनतान्त्रिक अधिकारों को पूरा–पूरा उपभोग करने के निर्बाध अवसर सुलभ होते हैं। यानी तब वहां जनवाद वास्तविक रूप धारण करता है। वह मुट्टी भर शोषकों और सत्ताधारी प्रभुवर्ग का जनवाद नहीं बल्कि करोड़ों–करोड़ों श्रमशील जनता का जनवाद बनता है। मिल, कारखानें, खेत, खलियानों, दफ्तर, सभी कुछ किसी एक–दो मालिक की मर्जी के अनुसार नहीं, बल्कि उन्हें चलाने वाले सैकड़ों–हजारों मजदूरों, किसानों, कर्मचारियों की राय और मर्जी से चलते हैं।''[4]

वस्तुतः जनतंत्र या जनवाद की साफ व स्वच्छ स्थापना के लिए देश, विदेश के अनेक विद्धानों ने अपने–अपने सिद्धान्त निर्मित किये। सारे संसार से साम्राज्यवादी ताकतों का विनाश करके, पूंजीवादियों की शोषण प्रवृत्ति का अन्त करके एक नवीन समाज की स्थापना करने के लिए जनवादी विचारकों ने संघर्ष को अपनाकर सर्वहार वर्ग को सःसम्मान से समाज में प्रतिष्ठित किया। हिन्दी साहित्य के प्रबुद्ध रचनाकारों ने भी जनवाद के सन्दर्भ में अपने विचार अपनी रचनाओं में समावेशित किये। कविता का सबसे दायित्व अहमं सर्वहार वर्ग को जागृत करके उसमें क्रांतिकारी चेतना को समावेशित करना रहा है। हिन्दी कविता के विचारकों का मानना है :– ''जनवादी कविता का सबसे बड़ा दायित्व सर्वहारा वर्ग चेतना को क्रांतिकारी बनाने में अपने ढंग से, अपनी सीमाओं के साथ सहयोग देना है, और जन संघर्षों से मिलने वाले अनुभवों को, जो संघर्षशील जनता के साथ अनुभव हैं जो इस प्रकार व्यक्त करना है कि वे अपनी समग्रता में उन्हें विकसित करने में सहायक सिद्ध हो।''[5] 'जनवाद' के सम्बन्ध में भारतीय विद्धानों ने अपने विचारों को प्रस्तुत करते हुए साहित्य में यथार्थ की प्रतिष्ठा की है। ऐसे यथार्थ की जो मानव जीवन के निकट हो। मनुष्य की जिन्दगी की सत्यता उस समय में इतनी प्रबल हो उठी थी इसका प्रमाण इसी तथ्य से मिल जाती है कि निराला और पंत जैसे छायावादी प्रेरणा पुरूष भी अपनी विचारधारा को परिवर्तित करने के लिए विवश हो गए। सुमित्रानन्दन पन्त ने 'रूपाभ' के सम्पादकीय में लिखा है :–''इस युग में जीवन की वास्तविकता ने जैसा उग्र आकार धारण कर लिया है उससे प्रचीन विश्वासों में प्रतिष्ठित हमारे भाव और कल्पना के मूल हिल गये हैं। अतएव इस युग की कविता स्वप्नों में नही पल सकती। उसकी जड़ों को अपनी पोषण सामग्री ग्रहण करने के लिए कठोर धरती का आश्रय लेना पड़ रहा है ..... ।''[6]

जनतन्त्र या जनवाद के साहित्यकारों ने सामाजिक यथार्थ के स्वरूप पर विशेष बल दिया है। जन–सामान्य के जीवन के यथार्थ सम्बन्धी अन्य दृष्टियों की अपेक्षा, ये जनवादी यथार्थ–बोध अधिक स्वस्थ, अधिक सम्पूर्ण तथा अधिक प्रेरक है, इस तथ्य को तटस्थ भूमिका पर कार्य करने वाले हिन्दी के शीर्ष समीक्षकों तक ने स्वीकार करते हुए सामाजिक – यथार्थ को महत्वपूर्ण माना है। जनवाद में सामाजिक यथार्थ को महत्वता देते हुए आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी जी ने लिखा–: ''परन्तु इस सबों को अतिक्रांत करने वाला एक अतिशय स्वस्थ और विकासोन्मुख यथार्थवाद भी है, जिसे हम सामाजिक यथार्थवाद कहते हैं। यह हमारे राष्ट्रीय अभ्यूत्थान का एक अनिवार्य साधन है, जिसके द्वारा हम अपने राष्ट्र में अधिकाधिक संतुलन और समानता ला सकते हैं।''[7]

हिन्दी साहित्य के अमर कथाकार व उपन्यास सम्राट तथा जनवाद के प्रेरणा स्रोत मुन्शी प्रेमचन्द्र जी ने सामाजिक उत्थान के लिए जनता से जुड़े साहित्य का होना अति आवश्यक बताया है। मुन्शी प्रेमचन्द्र ने इस सम्बन्ध में अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा है –:''मुझे यह कहने में हिचक नहीं है कि मैं और चीजों की तरह कला को भी उपयोगिता की तुला पर तौलता हूं। निस्संदेह कला का उद्देश्य सौन्दर्यवृत्ति की सृष्टि करना है और वह हमारे आध्यात्मिक आनन्द की कुन्जी है।''[8] ''जब उनका उद्देश्य, मनोरंजक, संयोग–वियोग, नायक–नायिका की कहानी मात्र का निर्माण करना नहीं है, अपितु इन प्रश्नों को भी उठाना है जिनसे समाज या व्यक्ति प्रभावित होते हैं।''[9]

जनवादी आन्दोलन के बुद्धजीवियों ने सदा कला को ही ग्रहण न करके अपने विचारों में जिस सौंदर्य की सृष्टि को प्राथमिकता दी है वह समाज के विकास या सामाजिक जीवन से घनिष्ट सम्बन्ध को प्रस्तुत करती है। इस विषय में डॉ0 रामविलास शर्मा ने अपने विचार स्पष्ट करते हुए कहा – ''कलाकार जिस सौंदर्य की सृष्टि करता है वह समाज निरपेक्ष किसी व्यक्ति की कल्पना की उपज नहीं है वरन् सामाजिक जीवन और सामाजिक विकास से उसका घनिष्ठ सम्बन्ध होता है।''[10] भारतीय विचारकों ने जनवाद का अर्थ समाज में रह रहे उस मनुष्य से माना है जो विषमताओं और विभीषिकाओं से मुक्त रहकर अपनी उन्नति करता है। भारत के इतिहास में उन्नीसवीं शताब्दी का युग राष्ट्रीय–जनवादी चेतना का युग है। गीता और वेदान्त की टीका प्रवृत्तिमार्गी टीका के परिणामस्वरुप इस काल में भारत में बौद्धिक क्रियाशीलता का अपूर्व स्फोटन हुआ तथा उसमें सामाजिक और धार्मिक विचारों में मौलिक परिवर्तन हुए। आर्यसमाज ने जन समुदाय में सांस्कृतिक राष्ट्रीयता की नींव डालकर आगे विकसित होने वाली राष्ट्रीयता की भावना को सुदृढ़ भूमि प्रदान की। इसका अमिट प्रभाव हिन्दी साहित्य पर पड़ा। स्वयं गुजराती होते हुए भी स्वामी दयानन्द ने अपनी सर्वोत्कृष्ट पुस्तक 'सत्यार्थ प्रकाश' हिन्दी में लिखी तथा आर्यसमाज के तत्वों का प्रचार भी हिन्दी में ही किया। 'स्वामी दयानन्द' द्वारा प्रवर्तित 'आर्यसमाज' की बौद्धिकता की छाप इस युग के तथा बाद के अनेक साहित्यकारों पर पड़ी। राष्ट्रीय आन्दोलन जो दशकों की दासता से मुक्ति के लिए प्रारम्भ हुआ था जो अनेक सामाजिक और आर्थिक स्तरों पर कार्य करता रहा। सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय आन्दोलन, ब्रिटिश सरकार का दमन चक्र, शोषणकारी शक्तियों के विरुद्ध क्रान्ति आदि से हिन्दी काव्य का आधुनिक काल व उससे जुड़े कवि अछूते न रह सके। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, आचार्य महावीर प्रसाद, प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुन्द गुप्त, श्रीधर पाठक, मैथिलीशरण गुप्त, रामनरेश त्रिपाठी, अयोध्यासिंह उपाध्याय, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत, सूर्य कान्त त्रिपाठी 'निराला', रामधारी सिंह 'दिनकर', माखनलाल चतुर्वेदी, गिरिजाकुमार माथुर, अज्ञेय, नागार्जुन, मुक्तिबोध और डॉ. शिवमंगल सिंह 'सुमन' आदि ऐसे रचनाकार हैं जिन्होंने अपनी देश व सामाजिक रचनाओं के माध्यम से जन–मन में देश व जन साधारण के लिए समर्पण भाव उत्पन्न कर दिया।

डॉ० शिवमंगल सिंह 'सुमन' जी ने अपनी कविताओं में जिस प्रकार से आम आदमी के जीवन के सुख–दुख को समावेशित करने का प्रयास किया है। वे वास्तव में एक श्रेष्ठ रचनाकार हैं। उन्होंने अपनी काव्यधारा में जनवाद को ग्रहण करते हुए आदमी के जीवन और समाज व देश की विषमताओं को वर्णित करते हुए, उसके अन्त के लिए कवि सुमन क्रान्ति को अपनाकर जन–जागरण किया है। अपनी जनवादी चेतना के अन्तर्गत डॉ0 सुमन जी के सामाजिक यथार्थवादी रूप, देश प्रेम, श्रम की आराधना एवं शान्ति का सर्मथन – गाँधीवाद का प्रभाव, व्यंग्यपूर्ण काव्य, जनांदोलन और जनतंत्र की आकांक्षा–तानाशाही का खुला विरोध जैसी मौलिक अभिव्यक्तियाँ काव्य में दिखाई पड़ती है। कवि 'सुमन' की भावना हमेशा ही जन–साधारण के प्रति समर्पित रही है। जिसके परिणाम स्वरूप उनकी जनवादी चेतना निखार के साथ प्रस्तुत हुई है। कविवर की जन भावना को यहाँ क्रमशः प्रस्तुत किया जा रहा है जिससे प्रगतिशील रचनाकार की रचनाओं का जनवादी मूल्यांकन हो सके।

डॉ0 शिवमंगल सिंह सुमन जी की कविताओं में सामाजिक यथार्थ से – परिपूर्ण विचारधारा के दर्शन होते हैं। धरातल के स्पर्श से अलग हटकर आसमान में उड़ने के प्रति उनकी नियति नहीं है। सामाजिक स्थितियों को जो मानव जीवन को विखेरने का कार्य करती है उनके विशुद्ध क्रांति की घोषणा तथा सामाजिक जन–जागरण को कविता का विषय बनाया। क्योंकि लेखक – कवि या अन्य कलाकार जो जिस वातावरण में विचरण करता है उस सृजन और सृजन कर्ता पर उसके क्रिया–कलापों का बहुत प्रभाव पड़ता हैं, जिससे उसका व्यक्तित्व व कृतित्व दोनों ही प्रभावित होते हैं। इसी संदर्भ में कवि सुमन जी कहते है–''किसी भी लेखक की रचना में परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप में उस समाज की प्रतिछाया जिसमें कि वह रह रहा है अवश्य पड़ती हैं।''[11]

हिन्दी काव्यधारा में 'सुमन' जी का पदापर्ण प्रगतिवादी विचारधारा के साथ–साथ एक राष्ट्रवादी–जनवादी रचनाकार के रूप में हुआ था। छायावादी दौर तक समाज का जो पक्ष सबसे अधिक उपेक्षित रहा प्रगतिवादी आन्दोलन में उसे कवियों, लेखकों आदि ने सर्वाधिक महत्वता प्रदान की है समाज के शोषित वर्ग, मजदूर वर्ग, किसान वर्ग, इत्यादि का चित्रण ही प्रगतिशील चिन्तकों की मुख्य विशेषता है। समाज में व्यापक रूप से फैली विषमता की स्थिति आर्थिक परिस्थितियों के कारण ही पैदा होती है, जिसका प्रभाव काव्य पर भी पड़ता है। कवि का विचार है –''ऊपर – ऊपर से यह कहना किसी प्रकार माना भी जा सकता है कि हमारी विचारधारा केवल आर्थिक भूमि पर ही अविलम्बित नहीं है। क्योंकि हमारी आर्थिक परिस्थितियों का प्रभाव पहले हमारी भाव चेतना पर पड़ता है और भाव चेतना का सामाजिक चेतना से उतना ही अविच्छिन्न सम्बन्ध है जितना व्यक्ति का और समाज का और फिर इसी सामाजिक चेतना की क्रिया–प्रक्रिया हमारे सारे वातावरण तथा राजनीतिक जीवन को प्रभावित करती है, यहाँ तक कि धीरे–धीरे वह हमारी मूल–भूत आर्थिक परिस्थितियों को ही परिवर्तित कर देती है।"[12] आर्थिक विषमता के कारण ही सामाजिक विषमता पैदा होती है। साम्यवादी वर्ग चेतना के प्रति कवि विश्वास करता है और यह सामाजिक विषमता जहाँ एक ओर संपन्न वर्ग भर–भर पेट खाता है, वहीं दूसरा वर्ग एक–एक दाने को तरसता है। इस विषमता को खत्म करने के लिए कवि सशस्त्र क्रान्ति का आवाह्न करता है। नंगे और भिखमंगों में कवि को अब अपनी समस्या के प्रति समाधान हेतु संघर्ष ही नजर आता है–:

'देखो वे नंगे भिखमंगे
आए हैं नूतन वेष लिए,
अब तक की जर्जर जगती में
नवयुग का नव संदेश लिए।"[13]

'जीवन के गान', 'प्रलय–सृजन', विश्वास बढ़ता ही गया, आदि काव्य – संग्रहों में कवि की जनवादी चेतना स्पष्ट देखी जा सकती है। कवि निम्नवर्गीय समाज के लोगों की दीन–हीन दशा देखकर दुखित होता है, और भूख से व्याकुल लोगों को जब गोबर से दाने बीनकर अपनी भूख मिटाने के लिए तत्पर हैं। इनकी यह दशा देखकर कविवर कहते हैं –:

''हन्त भूख में मानव बैठा
गोबर से दाने बीन रहा है,
और झपट कुत्ते के मुँह से
जूठी रोटी छीन रहा है।
साँस न बाहर भीतर जाती
और कलेजा मुँह को आता
हाय नहीं यह देखा जाता।''[14]

समाज में फैली इस क्रूर विषमता को देखकर कवि मुखर नहीं सकता है। वह सम्पूर्ण समाज को मुस्कराते हुए देखना चाहता है। वह साम्राज्यवादी ताकतों और पूँजीवादी शक्तियों की काली करतूतों का वर्णन करके निम्नवर्ग को जागृत करके क्रान्ति का संदेश देता है –:

'क्या जीवन व्यर्थ गँवाना है
कायरता पशु का बाना है,
इस निरूत्साह मुर्दा दिल से
अपने तन से, अपने मन से,
विद्रोह करो, विद्रोह करो।''[15]

यह आग्रह एक जनवादी रचनाकार ही कर सकता है। वह हर हालत में शोषित वर्ग को अधिकार दिलाना चाहता है। तभी तो कवि समाज में भंयकर अमानवीय कृत्यों से बेहद आहत है। वह मनुष्य के बदलते स्वरूप पर व्याकुल है, और कहता है :–

'कुछ नहीं समझ में आता है
क्यों चेतन जग फिर होगा जड़
जिसने अपने ही आँसू से
कर दी पथ पर फिसलन कीचड़
पग जिसमें धंसते जाते हैं
उससे ही निर्मित वह दल–दल
मैं चिर–व्याकुल, मैं चिर–चंचल।''[16]

प्रस्तुत पंक्तियों में समाज के निम्नवर्ग के प्रति सहृदयता की भावना प्रकट हुई है।

कवि 'सुमन' जी की कविताओं में कृषक तथा मजदूर जीवन से अधिक चित्र समाहित हैं। इसका कारण यह कहा जा सकता है कि समाज के मुख्य अंग के रूप में कृषक और मजदूर ही होते हैं। 'चल रही उसकी कुदाली' में जेठ माह की तपिश में खेत गोड़ते हुए किसान का चित्र कवि ने बखूबी से खीचने का प्रयास किया है। कवि की सामाजिक यथार्थ की भावना की कविता 'गुनिया का यौवन' दिखलाई पड़ती है। कवि ने चल रही उसकी कुदाली किसान वर्ग के अंसतोष को प्रकट किया है जो शोषण कर्ताओं के कारण पैदा हुआ है। भारतीय कृषक खेत में कुदाली चलाते–चलाते ही क्रान्तिकारी के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं। उसके इस विध्वंस स्वरूप को देखिए–:

'लाल आँखे, खून पानी
यह प्रलय की ही निशानी
नेत्र अपना तीसरा क्या
खोलने की आज ठानी
क्या गया वह जान
शोषक–वर्ग की करतूत काली
चल रही उसकी कुदाली।''[17]

जनवादी कवि डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन' जी ने अपनी कविताओं में सामाजिक यथार्थवादी रूप को अपनी कविताओं में प्रस्तुत करते हुए आम आदमी के प्रति समर्पण का भाव स्पष्ट रूप में जाग्रत हुआ है।

डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन' जी का काव्यात्मक जीवन साहित्य जगत में एक नई राष्ट्रीय व जनवादी चेतना के साथ अवतरित हुआ है। इनकी काव्यात्मक धारा में व्याप्त देश में अप्रतिहत संघर्षों की चिख–पुकार तथा उनसे निपटने के लिए राष्ट्रीय क्रान्ति व जन–जागरण की आवाज भी सुनाई पड़ती है। कवि 'सुमन' जी की काव्य यात्रा 1938–39 से आरम्भ होती है यह समय देश में संक्रमण का माना जाता था, तत्कालीन अवस्था में राष्ट्र पर विदेशी सत्ता अपने पंजे जमाएं हुए थी और यह शासन सत्ता देश की –सामान्य जनता शोषण के कुचक्र से पीस रही थी। जिस समय प्रगतिवादी काव्यधारा अपने प्रभाव को विस्तार रूप देने में गतिमय थी, उस समय देश और समाज में व्यापक रूप साम्राज्यसवादियों व पूँजीवादियों की शोषण प्रवृत्ति से देश की जनता क्रान्ति के लिए सुलग रही थी। एक तरफ देश की जनता विदेशी सत्ता भोगियों के चंगुल में फंसकर तवाह हो रही थी। तो दूसरी तरफ पूंजीवादियों के हथकंडो में फंसकर रोटी को मोहताज थी। धर्मभेद, जातिभेद, वर्ग भेद आदि के कारण, सम्पूर्ण राष्ट्र जल रहा था, और आज भी देश की यही समस्याएँ उसे मिटा रही हैं। यही कुछ परिस्थितियाँ थी, जिनसे कवि 'सुमन' जी का हृदय आहत हुआ और राष्ट्रीय भावना का जागरण हुआ।

डॉ0 'सुमन' अपनी कविताओं में काल्पनाशीलता की उड़ान और प्रणय संबंधी लालशा

युक्त अभिव्यक्तियों को नितान्त गौणता प्रदान करते हुए जीवन और जगत की सच्चाई को पहचानते हुए ज्वलन्त राष्ट्रीय समस्याओं को प्रधानता प्रदान की। उन्होने अपने कृतित्व में मार्क्सवादी चिन्तन और प्रगतिवादी दृष्टिकोण को समावेशित किया है। उन्होंने कहा है –''इस समय राष्ट्रीय भावना इतनी ही अहम् है कि मैने मार्क्सीय दर्शन को अपने देश और काल के परिप्रेक्ष्य में, राष्ट्र कल्याण के सन्दर्भो में समझा है। एक आत्म निर्भर, सुखी सार्वभौम राष्ट्र के रूप में भारत की कल्पना के लिए मुझे मानवीय संवेदना का यह क्रियात्मक, वैज्ञानिक और विवेक सम्मत दर्शन उपयुक्त प्रतीत हुआ। अपनी मातृभूमि के प्रति उसके संस्कारों और साधनाओं के प्रति मेरा गहरा ममत्व मेरी रचनाओं में प्रति ''जिन उपकरणों से मेरी देह बनी है/उनका अणु–अणु धरती की लाज बचाए।''[18] ये पंक्तियाँ मेरी इसी आस्था की परिचायक हैं।

कवि 'सुमन' जी के मार्क्स व प्रगतिवाद के सम्बन्ध में विचार जानने के पश्चात कहा जा सकता है कि उन्होंने गाँधीवादी विचारधारा को कम से कम राष्ट्रीय चिन्तन के दृष्टिकोण से अधिक महत्वपूर्ण नहीं समझा है। वह गाँधी जी के विचारों की कदर करते हुए उनकी विचारधारा को सामाजिक एकता–अखण्डता तथा जनहित के रूप में ज्यादा महत्वता प्रदान करते हैं। और यही कारण कहा जा सकता है कि वो क्रान्तिकारीयों के विचारों को भारतीय जनमानस के लिए अनुकरणीय समझते हैं। यदि गहराई से देखा जाएं तो चन्द्रशेखर, भगत सिंह, जैसे राष्ट्रीय क्रान्तिकारियों से अधिक प्रभावित हुए।

डॉ0 'सुमन' की काव्य चेतना में जो आरम्भ से रूमानी प्रवृत्ति दिखाई पड़ती है वह आगे चलकर राष्ट्रीय भावना के रूप में परिवर्तित हो गई। यही कारण है कि 'हिलोल' काव्य संग्रह में अधिकांशतः कविताएँ रूमानी छाया से ढकी दिखाई पड़ती है, और अन्त में कवि को ऐसा प्रतीत होता है कि वह अपने मूल पथ से भटक रहा है, तभी उसकी रचनाओं में क्रान्ति का दबा हुआ स्वर सुनाई पड़ता है। 'हिल्लोल' भले ही उनकी प्रणयानुभूति का दस्तावेज हों, पर उसमें देश के प्रति क्रान्ति की दबी हुई आवाज सुनाई पड़ती है। उदाहरण देखिए–:

'यह क्रांति – क्रांति की प्रतिध्वनि से
क्यों गूंज उठी जगती सारी
क्या सचमुच घर–घर सुलग गई
नव निर्माणों की चिनगारी ?''[19]

कवि का यह जागरण संदेश सम्पूर्ण देश में तथा देश के कोने–कोने के लिए था। क्योंकि राष्ट्र का कण–कण गुलामी की आग से तप रहा था, सबसे प्रमुख बात यह है कि उनकी क्रांतिकारी चिनगारी को भड़काने वाले कोई एक वर्ग, जाति के ही लोग नहीं थे, बल्कि देश का प्रत्येक वर्ग प्रत्येक जाति धर्म का बच्चा–बच्चा आजादी की जंग में अपने आपको आहुत करने को तत्पर दिखाई पड़ता है –:

'टूटी–फूटी झोपडियों से
उठता यह कैसा कोलाहल
क्या पतित–पददलित युग–युग के
कुछ आज हो चले है चंचल ?'[20]

कवि 'सुमन' जी ने अपने काव्य में देश की वर्तमान स्थित पर तीखे प्रहार किये और अपनी कविता में ऐसी क्रांति की शक्ति को संचलित किया जिससे स्वाधीनता के लिए लड़ रहे क्रान्तिकारियों में एक नयी स्फूर्ति तथा राष्ट्र के दुश्मनों से निरन्तर संघर्ष करने की प्रेरणा देते दिखाई पड़ते हैं। उन्होंनें स्वयं देश व समाज की आजादी के लिए क्रान्ति में भाग लिया। फलतः उनकी देश प्रेमी कविताओं में अनुभूति की सच्चाई प्रसारित हुई। कवि 'सुमन' जी राष्ट्रीय चेतना का स्वर जन जागृति तथा सशस्त्र क्रान्ति की आवाज व भारतीय माँ का संदेश सम्पूर्ण भारतीय जन मानस तक पहुँचाते हुए वो कहते हैं– :

'माँ कब से खड़ी पुकार रही
पुत्रों ! निज कर में शस्त्र गहो
सेनापति की आवाज हुई

तैयार रहो, तैयार रहो

आओ तुम भी दो आज विदा

अब क्या अड़चन, अब क्या देरी

लो आज बज उठी रणभेरी।'[21]

देश की गुलामी के दौर में जनता की जो दुर्दशा थी उसका बडा सटीक चित्रण कवि 'सुमन' जी ने अपनी रचनाओं में किया है। अपनी ही धरती पर अपने ही लोग एक–एक दाने को तरसते रहे, दूध मुहें मासूम बच्चे दूध की एक – एक बूंद के लिए तरसते रहें, और तो और जो विदेशी था वह कुत्तों की तरह हम लोगों को दुत्कारता था, पशुओं की तरह जोतता था आखिरकार वह यह अत्याचार कब तक सहनीय रहता लाठियों, गोलियों के घाव वास्तव में आज भी पीड़ा उत्पन्न करते है, इसी दृश्य को देखकर कवि 'सुमन' जी विनाशक क्रान्ति के लिए बेताब दिखलाई पड़ते हैं–:

''जो दूध – दूध कह तड़प गए

दाने–दाने को तरस गए

लाठियाँ गोलियाँ जो खाईं

वे घाव अभी तक बने रहे

उन सबका बदला लेने को

अब बाँहें फड़क रहीं मेरी

लो आज बज उठी रण भेरी।''[22]

'यह तो विप्लव की बेला है', 'लो आज बज उठी रण भेरी', 'मेरा पथ मत रोको रानी', 'मजदूर किसानों बढ़े चलों' (जीवन के गान), कविताओं में डॉ0 सुमन जी ने राष्ट्र की जनता को परतन्त्रता के विरोध में तथा स्वतंत्रता के लिए प्रोत्साहित करते हुए निराशित देशवासियों के नव स्फूर्ति का संचार किया वह वास्तव में अपने आप में तथा राष्ट्रीयता के प्रति भी एक अद्भुत चित्रण दिखाई पडता है। कवि ने स्वाधीनता के लिए आम आदमी में जागरण सन्देश तथा स्वतंत्रता के महासंग्राम में अपनी आहुति देने को प्रेरित किया। एक उदाहरण दृष्टव्य है–:

'कुछ मस्तक कम पड़ते होगें

जब महाकाल की माला में

माँ माँग रही होगी आहुति

जब स्वतन्त्रता की ज्वाला में

पल भर भी पड़ असमंजस में

पथ भूल न जाता पथिक कहीं।''[23]

डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन' जी की काव्यधारा में राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक चेतना तथा जनवादी चेतना मूल रूप से दृष्टव्य होती हैं। उनकी राष्ट्रीय चेतना की आवाज प्रमुखता से 'जीवन के गान' में सुनाई पड़ती है, देश प्रेम सम्बन्धी जितनी भी रचनाएँ हैं उनके शब्द–शब्द में सशस्त्र क्रान्ति की ध्वनि सुनाई पड़ती है। जैसा कि पहले भी कहा गया है कि इनकी काव्य साधना मार्क्सवादी व प्रगतिवादी चिन्तनधारा से समम्लित है। उस समय की परिस्थितियाँ ही जवानी और आग की रहीं। कवि के तन में भी जवानी और मन में रवानी का गतिमय आवेश समावेशित था। उधर देश में क्रान्तिकारियों का आन्दोलन चल रहा था, इन क्रान्तिकारियों से व उनकी विचारधारा से उनका सान्निध्य स्थापित हुआ। जिसके प्रति उत्तर में पराधीनता भूख और शोषण के प्रति देश व्यापी जिहाद में वो भी कूद पड़े और नई आग, भारत के जागरण या अत्याचारों के विरूद्ध अपने ओजस्वी कृतित्व व तेजस्वी व्यक्तित्व से सम्पूर्ण राष्ट्र में क्रान्ति का सन्देश भरते हुए देश के जनमन को बलिदान के लिए प्रोत्साहित करते हुए कहते हैं–:

''आज विदेशी बहेलिए को

उपवन ने ललकारा

कातर – कण्ठ क्रौंचिनी चीखी

कहाँ गया हत्यारा

कण–कण में विद्रोह जग पड़ा

शांति क्रान्ति बन बैठी

अंकुर–अंकुर शीश उठाए

डाल – डाल तन बैठी।''[24]

भारत की धरती आंतकवाद, अलगाववाद, भ्रष्टाचार आदि की ज्वाला से जलकर खाक हो रही है। क्या कर रहें इस समस्याओं से निपटने के लिए हमारे देश के सत्ता भोगी यह अत्यन्त विचारणीय प्रश्न है, आज देश की वर्तमान स्थिति को देखकर कहा जा सकता है। कि कवि 'सुमन' जी की क्रान्तिकारिता को सहृदयता से एक बार फिर देश व समाज के लिए अपनाना होगा। राष्ट्र की वर्तमान स्थिति पर कवि की कविता 'मेरा देश जल रहा कोई नहीं बुझाने वाला, कतई सटीक बैठती है–

घर आँगन सब आग लग रही
सुलग रहे वन–उपवन
दर–दीवारें चटख रहीं हैं
जलते छप्पर–छाजन ।''[25]

कवि देश की समस्याओं के प्रति जागरूक है। स्वतन्त्रता से पूर्व तो राष्ट्रीय–कवियों का केवल एक ही उद्देश्य था–स्वतन्त्र होना। अब कवि की जिम्मेदारी भी बढ़ रही है। वास्तव में कवि को राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक समस्याओं के प्रति सचेत रहना पड़ेगा। सुमन जी अपने कर्तव्य के प्रति पूर्ण जाग्रत है।

डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन' जी की कविताओं में जनवाद के समग्र रूप प्रस्तुत हुये है। उन्होंने जन कल्याण की भावना अपने काव्य में समावेशित की है वहीं देश के प्रति भक्ति, समाज के प्रति अनुराग साफ दिखाई पड़ता है। कवि सुमन जी ने अपनी रचनाओं में श्रम की आराधना हुये शान्ति का समर्थन किया है।खाली हाथ वैठना और सिर्फ जंग के ही विषय में दिन – रात सोचना कवि को अच्छा नहीं लगता है।वह जनता से आग्रह करता है–:

क्या जीवन व्यर्थ गँवाना है
कायरता पशु का बाना है
इस निरूत्साह मुर्दा दिल से
अपने तन से, अपने मन से
विद्रोह करो, विद्रोह करो।''[15]

डॉ0 सुमन जी श्रमिक वर्ग में जोर भरते हुये कहते हैं –

''तुम गरजो आज प्रलय होगी
शीर्ष वर्गों की क्षय होगी
दुनिया के कोने–कोने से
मजलूमों की जय–जय होगी
अत्याचारी की छाती पर तुम चढ़े चलो–तुम चढ़े चलो
मजदूर – किसानों बढ़े चलो।''[26]

कवि सुमन ने श्रम के प्रति पूर्ण आस्था व्यक्त करते हुए कृषक जीवन के प्रति वह अपनी सम्वेदना व्यक्त करता है। उसका मानना है कि वह अपनी मेहनत के बल पर ही अपने जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन ला सकता है –

"भूमि से रण ठन गया है
वच्छ उसका तन गया है
सोचता मैं, देव अथवा
यन्त्र मानव बन गया है
शक्ति पर सोचो जरा तो
खोदता सारी धरा जो
बाहुबल से कर रहा है
इस धरणी को उर्वरा जो।''[27]

कविवर सुमन जी विश्व में संघर्ष से नफरत करते हैं और वो शान्ति की स्थापना करने के लिये तत्काल चलाये जा रहे शान्ति आन्दोलन का समर्थन करते हुए डॉ0 सुमन जी के मूल मन्त्र सत्य अहिंसा को अपनाने के लिए आग्रह करते हैं। वह गाँधी जी का प्रयोग अपनी कविता में सिर्फ शान्ति स्थापना हेतु ही करते हैं। कवि नें शान्ति के अग्रदूत को स्मरण करते हुयें खून–खराबे की दुनिया से नफरत करते हुए शान्ति का समर्थन कि है–:

"एक गया कारवाँ, सस्त–लस्त
हिंसक पशुओं से भरी राह
मानवता कातर, अश्रु सिक्त
हिचकी ले–ले मर रही आह
तुम कहाँ शान्ति के साथ वह।"[28]

'मिट्टी की बारात', 'पर आँखे नहीं भरीं', आदि काव्य संकलनों में कवि देश, समाज व विश्व में शान्ति का समर्थन करता है। और युद्ध के प्रति नफरती भाव व्यक्त – करता है। वह गाँधी जी के आदर्श पथ को अपनाता है। तो इसीलिये की समाज के मानवों में शान्ति कायम हो सके और एक पवित्र समाज का निर्माण हो जिससे एक दूसरे के लिये प्यार हो। इसी भाई–चारे को स्थापित करने के लिये वह गाँधी बाबा को स्मरण करते हुये कहता है–:

"हम एक – आन पर कोटि–कोटि
प्राणों की भेट चढाएँगें
सपनों को सत्य बनाएँगें
भाई–भाई न लड़ेगें अब
विछड़ों को गले लगाएँगें
हम अन्धकार की छाती पर
नव जीवन – ज्योति जलाएँगें।"[29]

डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन' ने अपनी कविताओं में श्रम की आराधना करते हुए शान्ति का आवाहन किया है। यही उनका राष्ट्रीय–जनवाद है।

डॉ० शिवमंगल सिंह 'सुमन' के काव्य पर गाँधीवादी विचारधारा का प्रभाव भी दिखाई पड़ता है, उन्होंने गाँधी जी के सिद्धांतों का अनुकरण करते हुए अहिंसात्मक मानवता के निर्माण पर विशेष ध्यान दिया है। उनका मानना था कि जब तक समाज या देश में शान्ति पूर्ण वातावरण नहीं होगा तब तक जन–साधारण के हितों की परिकल्पना भी नहीं की जा सकती है। जैसा कि उन्होंने अपनी काव्य चेतना पर गाँधीवादी विचारधारा के प्रभाव के सन्दर्भ में कहा है – ''गाँधी जी अप्रतिहत साधना और वर्चस्व का मैं कायल रहा हूँ। उस लोक कल्याणकारी आराधना का कौन प्रशंसक नहीं होगा ? इसीलिए खूनी क्रान्ति की विचारधारा के बावजूद लोक साधना की इस दिव्यतम मुर्ति ने मुझे अभिभूत किया था।"[30] कवि ने गाँधी के दर्शन को अपनी कविताओं में वहां ग्रहण किया जहाँ उसे लोक – कल्याण के लिए आवश्यक लगा।

कवि 'सुमन' जी की जनवादी चेतना गाँधी जी की विचारधारा से भाव–विभोर है। गांधी जी के प्रति कवि की अटूट श्रद्धा है। गाँधी जी अपने आपको हमेशा साम्यवादी ही कहते थे। गाँधी जी की अहिंसा जीवन का नियम है। उनकी नजर में अहिंसा साध्य नही, साध्य सत्य है। लेकिन हम सत्य का दर्शन केवल अंहिसा का पालन करते हुए ही कर सकते हैं। कवि डॉ0 सुमन जी एक तरफ मार्क्स के साम्यवाद का समर्थन करते हैं तो दूसरी तरफ गाँधी जी की अंहिसा के प्रति श्रद्धा रखते हैं। उनकी दृष्टि में, कर्तव्य चेतना से जागृत होकर जन–अधिकार प्राप्त करने के लिए यदि हिंसा का भी सहारा लेना पड़े तो वह अहिंसा ही है। इस संदर्भ में उन्होंने कहा–:

"कण–कण में विद्रोह जग पड़ा
शांति क्रांति बन बैठी
अंकुर – अंकुर शीश उठाए
डाल–डाल तन बैठी।"[31]

डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन' जी एक सामाजिक व जनवादी कवि हैं, उनके जहन में धार्मिक रूढ़ियों तथा अंध विश्वासों के प्रति कोई जगह नहीं है। वह मानवता की रक्षा ही धर्म समझते हैं और उसी पर विश्वास भी करते हैं। कवि 'विडम्बना' कविता में सामाजिक बुराइयों का खुलासा करते हैं, और वह विखण्डन की स्थिति पर तथा धार्मिक रूढ़ियों व आडम्बरों पर व्यंग्य करता हुआ वह कहता है–:

"ईश्वर ईश्वर में आज पड़ गया अंतर
टुकड़ों – टुकड़ों में बटाँ मनुजता का घर
ली ओढ़ धर्म की खोल पर हृदय सूना

पूजन – अर्चन सब व्यर्थ देवता पत्थर ।"[32]

समाज में फैले जाति धर्म के भेद–भाव को मनुष्य भूल जाते है, जब भूखमरी व्याप्त होती है। कवि सामाजिक समस्याओं का समाधान धार्मिक रूढ़िवादिता से संभव नहीं है, तथा सबको एक जुट होकर इससे निपटना होगा। कवि धर्म व जाति के भेद–भाव पर व्यंग्यात्मकता की शैली में कहता है–:

''जाति धर्म के भेद कहाँ सब
बँधे भूख की डोर
हिन्दु मुस्लिम खींच रहे सब
इन्हें अपनी–अपनी ओर।"[33]

उपर्युक्त व्यंग्यों में कवि ने परम्परा को ही निभाया है। इनमें उसकी मौलिक कल्पना नहीं है। इसी तरह के व्यंग्य 'मिट्टी की बारात', में देखने को मिलता है। आज के सामाजिक परिवेश में धर्म के मूल तत्वों से दूर होता जा रहा है और धार्मिक आडम्बरों तथा अंध विश्वासों के वातावरण से कवि का मन ऊब गया है। वह कहता है–:

जीवन भाग गया है
मंदिरों, मस्जिदों और गिरजा घरों पर
जम–सी गई है
अर्चना की अर्चियों मे
ठिठुरी राख
भक्तों से अधिक
घन्टों की टनटनाहट में
हरारत है।''[34]

अतः डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन' जी ने अपनी व्यंग्यपरक रचनाओं में धार्मिक रूढियों पर जबरजस्त व्यंग्य किये हैं, तथा जो भाव कवि के प्रकट हुए हैं, वे सीधी–सीधी भाषा से संभव कतई नहीं थे। उनकी व्यंग्य परक कविताओं में कहीं न कहीं जनवादी चेतना मुखर हुई है। वह हर हाल में समाज के उस वर्ग के दुख–दर्द दूर करना चाहता है जो पूर्ण रुप से निराशा के साये में डूब चुका है और यह मान चुका है कि अब घूटन के सिवा कुछ नहीं बचा है।

मानव समाज के शोषक वर्ग के प्रति कवि कभी जिहाद का ऐलान करता सुनाई पडता है तो कभी समाज में मानव के बदलते स्वरूप पर चिन्ता व्यक्त करता सुनाई पड़ता है। रूप मनुष्य का पर काम दानवों जैसा है, वह दानवता पर व्यंग्य की भाषा में कहता है –

''मानव की छाती पर बैठा
झूम रहा दानव मतवाला
सींग पूँछ से हीन पशु बना
खींच रहा है रिक्शावाला।''[35]

उक्त कविता में कवि ने सामाजिक यथार्थ को प्रस्तुत किया है, और अपने सामाजिक भावों को प्रस्तुत करते हुए व्यंग्यात्मक शैली में पूँजीवादी वर्ग की आलोचना की है। कवि सुमन जी ने अपनी जनवादी चेतना के अन्तर्गत समाज, देश को भ्रष्टाचार से युक्त चेतना पर तीखे व्यंग्य करते हुए अपनी कविताओं में सरलीकरण किया और आम आदमी के लिए आकर्षक बनाते हुए जनवादी कवि के रूप में हमारे समक्ष प्रस्तुत हुए हैं।

जनवादी कवि डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन' जी ने जन–आंदोलन को अपनी काव्य चेतना के माध्यम से विशेष रूप में प्रस्तुत किया है। उन्होंने अपने काव्य संग्रह 'हिल्लोल' की अन्तिम कविता में जनक्रान्ति के लिए जन – जन को जाग्रत करने का प्रयास किया है। कवि समाज के प्रत्येक वर्ग को साथ लेकर शोषणकारी ताकतों को नष्ट करने के लिए व्याकुल दिखाई पड़ता है। कवि सुमन जी अपने जन आंदोलन को सुख–शांति की स्थापना के लिए चलाना चाहते है। जैसा कि उन्होंने स्वयं कहा है –:

''उनका स्वागत करना होगा
आओ, उठो, देरी न करो
सुख–शांति स्नेह समभावों से
जग का ऑचल भरना होगा।"[36]

कवि ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए जन जागृति करके सम्पूर्ण देश में जन आंदोलन चलाकर साम्राज्यवादी ताकतों का विनाश करने के लिए कहता है–:

"आओं, उठो, चलो, जल्दी

समरांगण में कुहराम मचाने

पीकर जिसका दूध खड़े हैं

उस माता की लाज बचानें

बने वह देखो लग रहा समर में आज शहीदों का मेला हैं

यह तो विप्लव की बेला है।"[37]

जनवादी चेतना के प्रखर रचनाकार ने जन–आंदोलन के देश से अंग्रेजी सत्ता को उखाड़–फेंकने के लिए आवश्यक बताया है।

जनतंत्र की आकांक्षा – तानाशाही का खुला विरोध श्री शिवमंगल सिंह 'सुमन' की जनवादी चेतना की मूल विशेषता है। सुमन जी ने अपने काव्य में लोकतन्त्र या जनतन्त्र की स्थापना करते हुए वे सम्पूर्ण देश और समाज में जनतंत्र की आवाज को ले जाने का प्रयास करते हैं। डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन' जनतंत्र को लाने के लिए चिर–शोषित मानव के हृदय में जनवाद की आशा जाग्रत करने का प्रयास करते हैं। इस संदर्भ में वह कहते हैं–:

"आज मत खोजो अँधेरा

आज नवयुग का सबेरा

आज 'चिर – शोषित हृदय में भी जगी है एक आशा

आज कवि कैसी निराशा।"[38]

जनवादी कवि ने देश में लोकतन्त्र को स्थापित करने के लिए आशावादी होते हुए वह क्रांति का आवाहन करते हुए प्रिय से कहता है –:

"मेरी वाणी में अभिशापित

मानवता की चीख भरी है

मेरी झोली में नवयुग के

संदेशों की भीख भरी है

नवयुग का निर्माण हो रहा

आओ हाथ बटाओं

चाहे मुझको मत अपनाओं।"[39]

डॉ० सुमन जी के जनवाद की यह विशेषता है कि उन्होंने तानाशाही या साम्राज्यवादी शक्तियों का खुला विरोध किया है। 'विद्रोह करो, विद्रोह करो', 'तब समझूंगा आया वसन्त' आदि कविताओं में देखा जा सकता है।

डॉ.सुमन के काव्य में स्वतन्त्रता या जनतांत्रिक आन्दोलन का स्वर सुनाई पड़ता है। 'धधक रही मरघट की ज्वाला' जनतन्त्र की अग्नि का प्रतीक है। जो देशवासियों से आहुति देने का आवाहन करती है। तानाशाही की जंजीरों में जकड़ी हुई भारतमाता की पुकार को सुनकर कवि का खून खौल उठता है। वह कहता है–

"पैंतीस कोटि लड़के बच्चे

जिसके बल पर ललकार रहे

यह पराधीन बन निज गृह में

परदेशी को दुत्कार रहे

कह दो अब हमको सहन नहीं

मेरी माँ कहलाए चेरी

लो आज बज उठी रणभेरी !"[40]

अस्तु, डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन' जी की राष्ट्रीय–जनवादी चेतना से जुड़ी कविताओं में जनतंन्त्र की आकांक्षा और तानाशाही का खुला विरोध स्पष्ट रूप में प्रदर्शित हुआ है। कवि सुमन के काव्य की जनवादी चेतना के अन्तर्गत सामाजिक परिदृश्य का वास्तविक चित्रण हुआ है। कविवर ने देश के प्रति अपने समर्पित भाव को प्रस्तुत करते हुए जनतन्त्र या लोकतन्त्र की स्थापना के लिए

क्रान्तिकारी संघर्ष किया है। उसने श्रम की आराधना करके श्रमिक वर्ग के प्रति अपनी संवदेना व्यक्त करते हुए शांति का समर्थन किया है। उनकी कविताओं में जो गाँधीवाद का प्रभाव दिखाई देता है, वह वास्तव में मानवता की स्थापना के लिए एक मूल मन्त्र के रूप में प्रदर्शित हुआ है। डॉ0 सुमन जी ने व्यंग्यात्मक रचनाओं के माध्यम से देश व समाज के शोषणकारी शक्तियों पर व्यंग्यात्मक तीखे प्रहार किये हैं। उन्होंने ऐसे जन आन्दोलन को अपना समर्थन दिया जो मनुष्य के कल्याण और हित के लिए किये जा रहे हो। उक्त चिन्तन से स्पष्ट कि जनवादी कवि शिवमंगल सिंह 'सुमन' राष्ट्रीय–जनवादी चेतना के युग पुरूष हैं।

संदर्भ

1. धीरेन्द्र वर्मा–संपादक– हिन्दी साहित्य कोश, भाग–1, पृष्ठ–257
2. दि कसाइज ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी, पृष्ठ– 308
3. धीरेन्द्र वर्मा–संपादक– हिन्दी साहित्य कोश, भाग–1, पृष्ठ– 256
4. ललित मोहन अवस्थी– वाम चिंतन जनवाद और लेखक, पृष्ठ –75
5. उर्मिलेश–समकालीन जनवादी , नई कहानी , अंक–4 सितंबर 79,पृष्ठ–71
6. सुमित्रा नंदन पंत–रुपाभ, सम्पादकीय, अंक–1 जुलाई 1938
7. आचार्य नंददुलारे बाजपेई–नया साहित्य, नये प्रश्न–पृष्ठ–138
8. मुंशी प्रेमचंद–साहित्य का उद्देश्य–पृष्ठ–19
9. वही, पृष्ठ–05
10. डॉ0 रामविलास शर्मा– आस्था और सौंदर्य–भूमिका
11. डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन'– सुमन समग्र–खंड 1,परिशिष्ट–पृष्ठ–376–377
12. वही,पृष्ठ–373
13. वही, 'हिल्लोल' पृष्ठ–36
14. वही, 'जीवन के गान' पृष्ठ–128
15. वही,..... पृष्ठ–131
16. डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन'–'प्रलय सृजन पृष्ठ–155
17. वहीं, पृष्ठ–163
18. वही, सुमन समग्र–खंड–2, वक्तव्य के घेरे में, पृष्ठ–09
19. वही 'हिल्लोल,पृष्ठ–76
20. वही
21. वही,सुमन समग्र–खंड–1, 'जीवन के गान, पृष्ठ–95
22. वही
23. वही, 'विश्वास बढ़ता ही गया
24. वही, 'जीवन के गान', पृष्ठ–132
25. वही, पृष्ठ–163
26. व्ही, 'पर आंखें नहीं भरी ,पृष्ठ–365
27. वही ,वक्तव्य के घेरे में ,पृष्ठ–08
28. वही ,'विश्वास बढ़ता ही गया', पृष्ठ–245
29. वही ,..... पृष्ठ–256
30. डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन'–सुमन समग्र–खंड–2 'प्रलय सृजन,पृष्ठ–211
31. वही , 'मिट्टी की बारात',पृष्ठ–157
32. डॉ0 शिवमंगल सिंह 'सुमन'–सुमन समग्र–खंड–1, 'जीवन के गान, पृष्ठ–129
33. वही, 'हिल्लोल',पृष्ठ–77
34. वही, 'जीवन के गान, पृष्ठ–94
35. वही,.....,पृष्ठ–117

36. वही,..... पृष्ठ–122

37. वही, पृष्ठ–95

38. वही,पृष्ठ–103

39. वही

Copyright © 2017, Dr. Krishna Kant Dubey. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.